Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

हिन्दी साहित्य

(व्याख्या : पद्य खण्ड)

भाग-1

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CSHL12

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

हिन्दी साहित्य

(व्याख्या : पद्य खण्ड)

भाग-1

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPSC DLP

विषय सूची (Contents)

भाग–1

1. कबीर (आरंभिक सौ साखियों की व्याख्या) 5-54

2. पद्मावत (जायसी) [नागमती-वियोग खण्ड और सिंहल-द्वीप खण्ड की व्याख्या] 55-77

3. भ्रमरगीतसार (सूरदास) [आरंभिक सौ पदों की व्याख्या] 78-158

अध्याय
1

कबीर (आरंभिक सौ साखियों की व्याख्या)

विद्यार्थियों को व्याख्या समझाने के लिये हमने यहाँ मूल रचना के कुछ अंशों का उपयोग किया है। इसके लिये हम इसके लेखक/संपादक तथा प्रकाशक के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

गुरु कौ अंग

1

सतगुरु सवाँ न को सगा, साधी सईं न दाति।
हरिजी सवाँ न को हितू, हरिजन सईं न जाति।।

शब्दार्थः सवाँ-समान, को-कोई भी, सगा-अपना, साधी-शुद्धि, सईं-समान, दाति-दान, हितू-हितैषी।

संदर्भ एवं प्रसंगः *प्रस्तुत दोहा हिन्दी की भक्तिकालीन संतकाव्यधारा के प्रतिनिधि कवि कबीर की रचनाओं के संग्रह 'कबीर ग्रंथावली' के 'गुरु कौ अंग' से लिया गया है। संतकाव्य में गुरु के प्रति अनन्य कृतज्ञता ज्ञापित की गई है। यह दोहा भी इसी भावबोध से युक्त है।*

व्याख्याः गुरु के समान कोई अपना सगा-संबंधी नहीं है। एकमात्र गुरु ही हमारे अपने हैं। संस्कार का बोध कराने वाले साधु के समान कोई दूसरा दानी नहीं है। ईश्वर के समान कोई भी हितैषी नहीं है। अर्थात् जन्म से जाति की श्रेष्ठता नहीं है, बल्कि हरि-मार्ग पर चलने वाला ही सर्वश्रेष्ठ कुल का है।

विशेषः

1. गुरु के प्रति अनन्य कृतज्ञता-भाव की अभिव्यक्ति और उसके अप्रतिम महत्त्व का बखान संतकाव्यधारा की महत्त्वपूर्ण विशेषता है, जिसकी सुंदर और मार्मिक अभिव्यक्ति उपर्युक्त पंक्तियों में हुई है।
2. भक्तिकाल का सतगुरु आधुनिक शिक्षा के अध्यापक या गुरु से भिन्न है। ध्यातव्य है कि कबीर 'गुरु' नहीं 'सतगुरु' का महत्त्व बताते हैं, क्योंकि जहाँ गुरु का संबंध साधारण व शास्त्रीय ज्ञान से है, वहीं सतगुरु निःस्वार्थ भाव से जीवन के गहनतम रहस्यों का ज्ञान देता है। सतगुरु वह है जो हमारे भीतर अपर्याप्तता का बोध उत्पन्न कर हमारे अहंकार का नाश करता है और हमारे भीतर ज्ञान की प्यास उत्पन्न करता है। ऐसे गुरु के प्रति आनुभूतिक संबंध की अनुभूति करते हुए कबीर कृतज्ञता का भाव प्रकट करते हैं और बार-बार उसकी महत्ता का बखान करते हैं।
3. गुरु के प्रति कबीर के इस कृतज्ञता-भाव पर वैष्णवी भक्ति-चेतना और नाथ-परंपरा का प्रभाव लक्षित होता है।
4. संतकाव्यधारा का गुरु ब्रह्म को सिर्फ दिखाता है, केवल उसका ज्ञान देता है। शिष्य को ब्रह्मोपलब्धि के मार्ग की यात्रा स्वयं करनी होती है। ध्यातव्य है कि सूफीकाव्यधारा में गुरु पूरी साधना-यात्रा में साधक का साथ देता है।
5. इन पंक्तियों में कबीर भक्त को ही सर्वश्रेष्ठ जाति (हरिजन सईं न जाति) बता रहे हैं। प्रकारान्तर से यह जन्मआधारित वर्ण-व्यवस्था का खंडन है।
6. ये पंक्तियाँ आज के दौर के लिए भी प्रासंगिक हैं। आज, जबकि गुरु की हैसियत कम होती जा रही है, शिक्षा विक्रय की वस्तु बन गई है, तब भी ये पंक्तियाँ याद दिलाती हैं कि हर दौर में सच्चे मार्गदर्शक की जरूरत होती है।
7. पूरे दोहे में अनुप्रास अलंकार का सौंदर्य व्याप्त है।
8. सवाँन, सई, हितू जैसे तद्भव शब्द कबीर की भाषा की लोकोन्मुखता के परिचायक हैं।

2

बलिहारी गुरु आपणैं, द्यौं हाड़ी कै बार।
जिनि मानिष तैं देवता, करत न लागी बार।।

शब्दार्थः बलिहारी-न्यौछावर। आपणै-आपकी, अपने, निजी। द्यौंहाड़ी-पारिश्रमिक, दिहाड़ी। कै बार-कितनी ही बार। जिनि-जिन्होंने। मानिष तैं-मनुष्य से। बार-विलम्ब, देर। मानिष तैं देवता-मरणशील सीमित मनुष्य को देवता बनाना।

अध्याय
2

पद्मावत (जायसी) [नागमती-वियोग खण्ड और सिंहल-द्वीप खण्ड की व्याख्या]

विद्यार्थियों को व्याख्या समझाने के लिये हमने यहाँ मूल रचना के कुछ अंशों का उपयोग किया है। इसके लिये हम इसके लेखक/संपादक तथा प्रकाशक के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

नागमती वियोग खंड

1

नागमती चितउर पँथ हेरा। पिउ जो गए फिरि कीन्ह न फेरा।
नागरि नारि काहु बस परा। तेइँ बिमोहि मो सौं चितु हरा।
सुवा काल होइ ले गा पीऊ। पिउ नहिं लेत लेत बरु जीऊ।
भएउ नरायन बावन करा। राज करत बलि राजा छरा।
करन बान लीन्हेउ कै छंदू। भारथ भएउ झिलमिल आनंदू।
मानत भोग गोपीचँद भोगी। लै उपसवा जलंधर जोगी।
लेइ कान्हहि भा अकरुर अलोपी। कठिन बिछोउ जिअहिं किमि गोपी।
सारस जोरी किमि हरी मारि गएउ किन खग्गि।
झुरि झुरि पाँजरि धनि भई बिरह कै लागी अग्गि।। (1)

शब्दार्थ: फेरा-लौटना। नागरि-चतुर नारी। भारथ-महाभारत।

संदर्भ व प्रसंग: *प्रस्तुत पंक्तियाँ सूफी काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि जायसी के प्रबंध काव्य 'पद्मावत' के 'नागमती वियोग खण्ड' से उद्धृत हैं। पद्मावत में जायसी ने 'प्रेम' को एक बड़े जीवन-मूल्य के रूप में चित्रित करते हुए अपनी प्रेम-दृष्टि को कई प्रसंगों के समावेश द्वारा व्यापकता प्रदान की है। इनमें सर्वप्रमुख प्रसंग राजा रत्नसेन के नागमती को छोड़कर चले जाने के बाद नागमती के वियोग का है। इस पद में जायसी ने नागमती के विरह की मार्मिक अभिव्यंजना की है।*

व्याख्या: नागमती का पति रत्नसेन पद्मावती के प्रेम से वशीभूत होकर उसकी प्राप्ति के लिए सिंहलद्वीप चला गया है। नागमती रात-दिन चित्तौड़ के मार्ग पर आँखें एकटक लगाए रहती है क्योंकि उसका पति जब से यहाँ से गया, लौटकर वापस नहीं आया है। नागमती रत्नसेन के वापस न लौटने के कारणों पर विचार करती है कि निश्चय ही मेरा पति किसी चतुर नारी के प्रेम-पाश में फँसकर मुझे भूल गया होगा अथवा उस नारी ने अपनी मोहिनी मुद्रा दिखाकर उसके हृदय से मेरी स्मृति एवं मेरा प्रेम भूला दिया होगा। फिर नागमती आगे सोचती है कि जो हीरामन तोता हमारे यहाँ आया था, वह तोता के रूप में साक्षात् काल ही था जो मेरे पति का हरण कर ले गया है। वह तोता मेरे प्रिय को मुझसे न लेता, भले ही मेरे प्राण ले लेता। जिस प्रकार विष्णु ने वामन का रूप धारण कर राजा बलि के राज्य का अपहरण कर लिया था; कर्ण ने ब्राह्मण का रूप धारण कर परशुराम से उसका ब्रह्मास्त्र बाण माँग लिया था; महाभारत युद्ध के दौरान देवराज इंद्र ने कर्ण से सूर्य द्वारा उसे प्रदत अलौकिक अक्षय कवच और कुंडल माँग लिया था, उसी प्रकार यह तोता मुझसे मेरा पति माँग ले गया। भोग-विलास में मग्न राजा गोपीचंद को योगी जालंधर ने फुसला-बहलाकर भोगी से योगी बना दिया था, अक्रूर आतुर गोपियों से उनका कृष्ण छीनकर ले गए और उन्हें विरह की पीड़ा में तड़पने के लिए छोड़ दिया, किंतु कोई उन गोपियों को बताए कि कृष्ण से वियुक्त होकर वे कैसे जीवित रहें। इसी प्रकार, वह तोता मेरे पति को लेकर लुप्त हो गया। मैं भयंकर विरह पीड़ा में तड़प रही हूँ, अब मेरे प्राण कैसे बचेंगे?

विशेष:

1. इन पंक्तियों में विरहानुभूति का अत्यन्त मार्मिक चित्रण है। इसी मार्मिकता के कारण आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जायसी के विरह-वर्णन को 'हिन्दी साहित्य की अद्वितीय वस्तु' कहा है।

अध्याय
3

भ्रमरगीतसार (सूरदास) [आरंभिक सौ पदों की व्याख्या]

विद्यार्थियों को व्याख्या समझाने के लिये हमने यहाँ मूल रचना के कुछ अंशों का उपयोग किया है। इसके लिये हम इसके लेखक/संपादक तथा प्रकाशक के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

1

पहिले करि परनाम नंद सों समाचार सब दीपो।
और वहाँ वृषभानु गोप सों जाय सकल सुधि लीजो।।
श्रीदामा आदिक सब ग्वालन मेरे हुतो भेंटियो।
सुख संदेस सुनाय हमारो गोपिन को दुख मेटियो।।
मंत्री इक बन बसत हमारो ताहि मिले सचु पाइयो।
सावधान ह्वै मेरे हूतो ताही माथ नवाइयो।।
सुंदर परम किसोर बयक्रम चंचल नयन बिसाल।
कर मुरली सिर मोर पंख पीताम्बर उर बनमाल।।
जनि उरियो तुम सघन बनन में ब्रजदेवी रखवार।
बृंदावन सो बसत निरंतर कबहुँ न होत नियार।।
उद्धव प्रति सब कही स्यामजू अपने मन की प्रीति।
सूरदास किरपा करि पठए यहै सकल ब्रजरीति।।

शब्दार्थः वृषभानु-राधा के पिता। सुधि-समाचार। मेरे हुतो-मेरी ओर। मंत्री-यहाँ राधा से अभिप्राय है। सचु-सुख। बयक्रम-अवस्था। नियार- पृथक, अलग। यहै सकल ब्रजरीति-श्रीकृष्ण ने बताया कि यही सब ब्रज की रीतियाँ(व्यवहार) हैं।

संदर्भः प्रस्तुत पद हिंदी की भक्तिकालीन कृष्ण काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि सूरदास के पदों के संग्रह 'भ्रमरगीतसार' से लिया गया है, जिसका संपादन आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा किया गया है।

प्रसंगः *श्रीकृष्ण ब्रज छोड़कर मथुरा के राज-काज में व्यस्त हो गए, परंतु वहाँ के वैभव एवं सुख-ऐश्वर्य में रहते हुए भी उन्हें ब्रज की मधुर स्मृतियाँ सताती रहतीं। वे अपने परम मित्र उद्धव को ब्रजवासियों का समाचार जानने हेतु भेजते हैं जिससे शुष्क ज्ञानमार्गी उद्धव के हृदय में गोपियों के प्रेम एवं भक्ति मार्ग का संचरण हो सके।*

व्याख्याः (कृष्ण उद्धव से कहते हैं) हे उद्धव, ब्रज पहुँचकर सर्वप्रथम नंदजी को प्रणाम करना, क्योंकि वे हमारे पिता हैं और पिता के प्रति श्रद्धा होनी चाहिए। प्रणाम करने के पश्चात् उन्हें यहाँ का सभी समाचार बताना। वे हमारा समाचार पाने को व्याकुल होंगे, क्योंकि जबसे मैं मथुरा आया हूँ, उन्हें हमारा समाचार नहीं मिला है। तत्पश्चात् बरसाने जाकर वृषभानु गोप जी (राधा के पिता) का भी समाचार प्राप्त करना। फिर सुदामा एवं अन्य मित्रों से मेरी ओर से भेंट करना। बहुत दिनों से बिछुड़ने के कारण वे सब मेरे बिना अत्यंत दुखी होंगे। इन पंक्तियों में श्रीकृष्ण की अपने मित्रों के प्रति सख्यानुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति है। उसके पश्चात् वे उद्धव से कहते हैं कि गोपियों को उनका कुशल-प्रेम का संदेश देकर उनके कष्टों को दूर करना।

वहाँ जाने पर तुम्हें हमारे एक मंत्री से भेंट होगी जिसे देखने पर तुम्हें आनंद प्राप्त होगा। उसे हमारी ओर से सजगतापूर्वक नमस्कार करना। वह मंत्री हमारी वेशभूषा में मिलेगा, अतः भ्रमित मत होना। वह मंत्री परम् सुंदर है। किशोरावस्था को वह प्राप्त है और उसके विशाल नेत्र अत्यंत चंचल हैं। उसके पीताम्बर, मोरपंख, वक्षस्थल की वनमाला और मुरली के कारण भयभीत मत होना; क्योंकि सघन वन में वनदेवी तुम्हारी रक्षा करेंगी। कवि का यहाँ यह तात्पर्य है कि कृष्ण-वियोग में परम सुंदरी राधा कृष्णमय हो रही हैं, परन्तु कृष्ण वेश में रहने पर भी वह अपने चंचल नेत्रों और अनुपम सौंदर्य के कारण अपने

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456